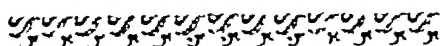
प्रकाशक
श्री मोहनलाल सोलंकी
कबूतरो का चौक, जोधपुर

मूल्य ३ रुपये

मुद्रक
हरिप्रसाद पारीक
साधना प्रेस, जोधपुर



समर्पण



जिसका कण-कण कहता है
मिटने की करुण-कहानी,
उन मिटते जग को अर्पित
मेरी यह 'अमिट निशानी'!





भावों की झंझाओं से
हो जाता उद्वेलित मन
जग कहता उनको कविता
जो मानव का पागलपन !



आहों के उद्यानों में
आँसू जब फूल सजाते
उनके करुणा - सौरभ - कण
कविता बन सम्मुख आते !



व्यथा-मलय के झोंकों से
भावों के सुमनों का पराग
जब अनजाने ही झरता है
हम कहते उसको काव्य-राग !



दो शब्द

वह जीवन की ओर भी अधिक गहराइयो में उतर सकेंगी। उनका कहना ठीक ही है—

'एक अपने ही हृदय के नाप से,
नाप सकते हम निखिल ससार ये।'

और भी,

'हृदय की गहराइयो को नापने
यत्र यह विज्ञान दे पाया नही,
एक करुणा-यत्र से तुम नाप लो
स्नेह है या स्वार्थ की छाया कही।'

आशा है भविष्य में कवित्री अधिक समृद्ध भेंटो से वाणी के भंडार को श्रीवृद्धि कर सकेंगी। मेरी शुभकामनायें उनके साधक कवि के प्रति है।

इलाहबाद } [सुमित्रानन्दन पंत]



सावित्री सोलंकी

प्रारम्भ से पूर्व

आज अपनी इस पुस्तक के विषय मे कुछ लिखने का प्रयास करते समय उतनी ही दुविधा एव कठिनाई अनुभव हो रही है, जितनी सुविधा एव स्वाभाविकता इसकी रचनाओ को लिखते समय अनुभव होती थी।

अपने अन्तराल मे उठने वाली भाव-तरगो को, जो समय-समय पर विभिन्न परिस्थितियो के हिलकोरो के साथ-साथ स्वत ही उमड पडती थी, उन्हे लिपिबद्ध कर डालने के स्वभाव से वशीभूत होकर मेरे पास शनै-शनै कागजो का एक ढेर सा जमा होने लगा। समय की गति, जीवन-पथ के उतार-चढाव व घेर-घुमाव के साथ-साथ मेरे लिखने मे भी जो परिवर्तन आता रहा, सम्भवत उसीके अनुसार मेरी इन रचनाओ मे भी विभिन्नता की झलक मिल सके। किंतु मेरे लिये मेरी नवी-दसवी कक्षाओ मे लिखी व आज की लिखी रचनाओ मे कोई विशेष अन्तर नही। वे भी मेरे हृदय के उतनी ही निकट है जितनी आज वाली। दोनो का मेरे लिए समान मूल्य है और इसीलिये इस पुस्तक मे सभी को स्थान मिला है।

मनुष्य एक ऐसा प्राणी है जो खाने, पीने व अर्थोपार्जन के साथ-साथ कुछ खेल खेलने, सिनेमा देखने आदि मे भी रुचि रखता है। कुछ समय तक इस रुचि या व्यसन से वचित रह जाने पर उसे एक अभाव सा महसूस होने लगता है। जब से मैंने अपने स्नेहशील माता-पिता की दुलारभरी गोद मे सिर उठा कर इस ससार के सघर्षमय कर्म-क्षेत्र मे पाँव रक्खा, कुछ होश सभाला, मुझे याद है कि तभी से अपने अन्तर के हर्ष, विषाद, भाव-प्रभाव सभी को, जो मेरी अनुभूति की सीमा मे प्रवेश पा जाते, मेरी अनुभूति को घनीभूत कर बोझिल-सी बना डालते, उन्ही को कागज पर कलम के सहारे उतार डालने की मेरी एक तीव्र इच्छा होती थी। वही इच्छा धीरे-धीरे मेरे स्वभाव का एक अग बन गई, मेरी रुचि या मेरा व्यसन बन गई। कुछ दिन या कुछ समय तक न लिख पाने से मेरे जीवन मे एक अभाव सा अनुभव होने लगता है, हृदय पर एक बोझ-सा भार महसूस होने लगता है, और कुछ लिख

मैंने करुणा, व्यथा एव विफलता को जीवन के अवरोधक नही अपितु प्रगति-पथ के प्रेरक के रूप मे ही पाया है, यथा—

धँसने दो मेरे पाँव व्यथा के कीचड मे,
मम करुणा ही कीचड मे कमल खिला देगी!
मेरे अन्तर की पीडा को पल जाने दो,
पीडा जीवन-क्रीडा बन मुझे भुला देगी!

सच पूछो तो इस पुस्तक मे मेरा अपना कुछ भी नही, सबकुछ इसी ससार की धरोहर है जो उसे निराकार से साकार करके लौटा रही हूँ। मेरी अतिशय भावुकता, यथार्थ मे देखा जाय तो मेरी माँ के करुण कोमल ममत्वभरे हृदय से ही मुझे अमिट निशानी के रूप मे मिली है। इसी विश्व की परिस्थितियो से मेरे जीवन मे सुख-दु ख की सृष्टि हुई, भावो-अभावो का निर्माण हुआ, अनुभूतियो की आँधी चली, जगत-जीवन के प्रति जो धारणायें व भावनायें मेरे अन्तर मे बनती गईं, जनमती व पनपती गईं, उन्ही का यह शब्द रूप आज आपके समक्ष प्रस्तुत किये देती हूँ। वैसे इसमे भी कितना व्यक्त हो पाया है व कितना अव्यक्त रहा है, कह नही सकती। कविता के विषय मे मेरी यही मान्यता व कामना रही है—

शब्दो से व्यक्त न होगे, ये मूक भाव अन्तर के,
ससृति को सुखदायक हों, जल-कण जीवन-निर्झर के!

पुस्तक को इस रूप मे लाने तक जिन्होने मुझे सहयोग दिया, जिन कविवरो ने अपनी सम्मतियाँ भेजने तथा श्रद्धेय कविवर श्री सुमित्रानन्दन पत ने जो 'दो शब्द' लिखने की अनुकम्पा की उसके लिये मैं सदैव हृदय से आभारी रहूँगी। धन्यवाद देना तो उनकी अनुकम्पा का अपमान ही होगा।

मेरी स्नेहिल सहेली सुश्री प्रीतिवती माथुर के भइया श्री स्वामीभाई ने मुख पृष्ठ का चित्र व श्री मोहनलाल ने अन्य चित्र बनाने का जो कष्ट किया उसके लिये इन सबके प्रति कृतज्ञता प्रकट करती हूँ।

'अमिट निशानी' मेरा प्रथम प्रयास है, जिसे आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुये मेरे अन्तराल मे सकोच मचल रहा है किंतु मुझे पूर्ण विश्वास है कि इसे मेरी प्रथम अभिव्यक्ति समझ कर पाठक मेरी त्रुटियो को क्षमा करेंगे।

स्वाधीनता दिवस
१९५८

सावित्री सोलंकी

अनुक्रम



अमिट निशानी

:

आँसू की धारा लिखती है
युग-युग बीती अमिट कहानी !

अरे विवशता - चट्टानों से
टकरा कर साहस है घायल,
जीवन-पथ पर चलते चलते
पग हारे, टूटी यह पायल,
पथ-रेणु में बिखरे नूपुर
देते किसकी स्मरण-निशानी ?

मृदुल अनिल के प्रति झोंके में
सुन पड़ता संगीत तुम्हारा,
नभ-सुमन धीरज बन आते
करते क्षीण विरह की कारा,
बन जाऊँ गम्भीर सदा को
रहता यह सागर का पानी !

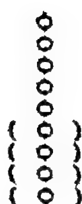
प्रस्तर-प्रस्तर के प्रतिकण है
अविचलता तेरी दिखलाते,
नव-पल्लव प्रसुमन औ किसलय
तेरी कोमलता दर्शाते,
महाशून्य के सुदृढ राज्य मे
आज साधना की मैं रानी!

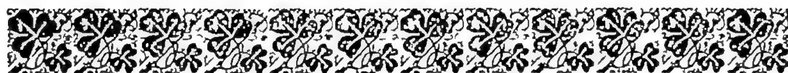
जीवन-गृह के करुणालय मे
सचित आशाओ के मोती,
बिखर गये अनजाने से जो
विश्वासो के दीप सजोती,
निज अस्तित्व मिटाती निज से
मेरी यह पागल नादानी!

अरुणा की आभा देती है
तव प्रतिभा का परिचय मजुल,
शशि-किरणो मिस बरसा करती
तेरी शीतलता नित अविरल,
जान-बूझ कर अनजाने से
करते तुम अपनी मनमानी!

जग का शीतल स्नेह सदा से
अन्तर मे एक आग लगाता,
श्वासो मे नि श्वासो मे
उर गीत तुम्हारे ही तो गाता,
रोम-रोम मे अकित रहती
वह किसकी सुषमा अनजानी?

जीवन-वन का साज सजाती
तेरी सुधि की मंजुल कलियाँ
भग्न-भावना करुण-कामना
की मडराती हैं मधु-अलियाँ,
स्मृति का कण कण बन जाना
केवल तेरी अमिट निशानी !





मैं !

:

अमिट नीरव गान हूँ मै !

दीपिका हूँ देह-गृह की
जगत्-नभ की नीलिमा हूँ,
लिप्त माया-जाल मे नित
पर विरागी अरुणिमा हूँ;

दग्ध जीवन-ज्वाल मे चिर-
शाप का वरदान हूँ मैं !

वीण तन की तार मन के
प्यास की झंकार उठती,
भावना के मधुर स्वर मे
करुण कोमल राग बजती,

चल रहा जग-गीत जिस पर
वह सुरीली तान हूँ मै !

रथ सदा मम हाँकती है
हृदय-जग की वासनायें,
पथ मे पथ धूलि बनती
भग्न उर की भावनायें,

आश मे विश्वास भी
नैराश्य मे स्वाभिमान हूँ मैं !

मिट रही प्रतियाम कब से
श्वास उर मे याद किसकी ?
बन रही मेरी कहानी
हार मेरी जीत उसकी,

प्रगति-पथ की प्रेरणा हूँ
जीतने की आन हूँ मैं !

आज तक इतिहास मेरा
लिख सका कोई न जग मे,
जन्म-मृत्यु-वाहन बदलती
बढ रही गन्तव्य-मग मे,

विश्व का प्रतिकण परख कर
भी अभी अनजान हूँ मैं !

00000



कौन ?

:

यह कौन हृदय मे मेरे
धडकन बन कर है आया,
मेरी पलको मे आकर
बन आँसू आज समाया ?

चुपचाप न जाने कोई
सूनापन बन छा जाता,
दिन रात न जाने क्यो वह
साँसो मे गुन-गुन गाता ?

आहो के अन्तराल से
नित कौन उमडता आता,
उन्मन उदास अन्तर मे
ज्वाला बन मुझे जलाता ?

जब कहा हृदय ने मेरे
तुम कौन, कौन अनजाने ?
जब नही तुम्हारा नाता
क्यो आते दुख बरसाने ?

तब कहा न जाने किसने—
"मेरा ऐसा अपनापन,
जिस जिस पर मैं हूँ रीझा
देता हूँ करुणा का धन।

सुख है सुसुप्ति जीवन की
दुख आँखें खोल जगाता,
सुख शीतल श्यामल तम है
दुख अनुभव-दीप जलाता।

आँसू उत्पीडन आहें
नित जीवन सरस बनातीं,
मुस्कान क्षणिक झाँकी दे
तम उलझन में छिप जाती।

करुणा जीवन की अरुणा
निद्रा से सदा जगाती,
सुख की मादक-मदिरा तो
दे थपकी उसे सुलाती।

जागृति जीवन की गति है
गति में जीवन मुस्काता,
पीड़ा का पावन पथ ही
जग से उस पार लगाता।"

थक जाते जब पद मेरे
सम्बल दे मुझे चलाता,
गिरने की घड़ियों में भी
है कौन उठाने आता?



कौन ?

:

यह कौन हृदय मे मेरे
धडकन बन कर है आया,
मेरी पलको मे आकर
बन आँसू आज समाया ?

चुपचाप न जाने कोई
सूनापन बन छा जाता,
दिन रात न जाने क्यो वह
साँसो मे गुन-गुन गाता ?

आहो के अन्तराल से
नित कौन उमडता आता,
उन्मन उदास अन्तर मे
ज्वाला बन मुझे जलाता ?

जब कहा हृदय ने मेरे
तुम कौन, कौन अनजाने ?
जब नही तुम्हारा नाता
क्यो आते दुख बरसाने ?

तब कहा न जाने किसने—
"मेरा ऐसा अपनापन,
जिस जिस पर मैं हूँ रीझा
देता हूँ करुणा का धन।

सुख है सुसुप्ति जीवन की
दुख आँखें खोल जगाता,
सुख शीतल श्यामल तम है
दुख अनुभव-दीप जलाता।

आँसू उत्पीड़न आहें
नित जीवन सरस बनाती,
मुस्कान क्षणिक झाँकी दे
तब उलझन में छिप जाती।

करुणा जीवन की अरुणा
निद्रा से सदा जगाती,
सुख की मादक-मदिरा तो
दे थपकी उसे सुलाती।

जागृति जीवन की गति है
गति में जीवन मुस्काता,
पीड़ा का पावन पथ ही
जग में उस पार लगाता।"

थक जाते जब पद मेरे
सबल दे मुझे चलाता,
गिरने की घड़ियों में भी
है कौन उठाने आता?



खोज

:

जिससे मेरा सम्बन्ध अमर
मै उसे खोजती हूँ आली !

नित नूतन उर मे आश लिये
युग-युग से चिर विश्वास लिये,
बढ रही प्रतीक्षा की डोरी
जो बुनती पीडा की जाली !

कहते हैं मुझसे शैल-शिखर
दुर्गम है उसकी आश न कर,
पाषाण-खण्ड कहते मुझसे
हम से कठोरतम है आली !

अम्बर ने बतलाया असीम
भू कहती धीरज सा ससीम,
सागर कहता कुछ थाह नही
कुछ भी न सखी उससे खाली !

सुमनों ने गुमसुम मुस्का कर
बतलाया उसका मुस्काना,
पल्लव ने हिल संकेत किया
वह खड़ा विश्व-वन का माली।

निशि कहती वह है अन्धकार
रुकता जिसमें जग का विहार,
संध्या कहती शीतल सुन्दर
ऊषा कहती अरुणा-लाली!

आँसू कहते वह करुणा सा
आहें कहतीं वह उन्मनपन,
अन्तर कहता वह मधुर भाव
जो है मानस की उजियाली।

पर मैं तो हूँ उन्मन उदास
तृप्ति ही मेरी चिर पिपास,
ले दीप साधना का मैंने
खोजा है खोज रही आली।

वह छिपा न जाने कहाँ आज
मैं स्वयं खोज का बनी साज,
वह अगम जाल है दुविधा का
मैं उसको सुलझाने वाली।

0000



खोज

:

जिससे मेरा सम्बन्ध अमर
मै उसे खोजती हूँ आली।

नित नूतन उर मे आश लिये
युग-युग से चिर विश्वास लिये,
वढ रही प्रतीक्षा की डोरी
जो बुनती पीडा की जाली।

कहते हैं मुझसे शैल-शिखर
दुर्गम है उसकी आश न कर,
पाषाण-खण्ड कहते मुझसे
हम से कठोरतम है आली।

अम्वर ने वतलाया असीम
भू कहती धीरज सा ससीम,
सागर कहता कुछ थाह नही
कुछ भी न सखी उससे खाली।

सुमनो ने गुमसुम मुस्का कर
वतलाया उसका मुस्काना,
पल्लव ने हिल सकेत किया
वह खडा विश्व-वन का माली ।

निशि कहती वह है अन्धकार
रुकता जिसमे जग का विहार,
सध्या कहती शीतल सुन्दर
ऊषा कहती अरुणा-लाली ।

आँसू कहते वह करुणा सा
आहे कहती वह उन्मनपन,
अन्तर कहता वह मधुर भाव
जो है मानस की उजियाली ।

पर मै तो हूँ उन्मन उदास
तृप्ति ही मेरी चिर पिपास,
ले दीप साधना का मैने
खोजा है, खोज रही आली ।

वह छिपा न जाने कहाँ आज
मै स्वय खोज का वनी साज,
वह अगम जाल है दुविधा का
मै उसको सुलझाने वाली ।

oooo

मुक्तक



तुम हृदय के पास हो
है पास जितनी सास ये,
दूर हो तुम दूर जितनी
चिर मिलन की आश है।

•

तुम मधुर हो मधुर जितनी
प्रीति की मृदु भावना,
किंतु कटु इतने कि जितनी
स्वार्थो की साधना।

•

तुम सरल हो सरल जितनी
शिशु - हृदय की भावना,
तुम कुटिल हो कुटिल जितनी
है कपट की कामना।

•

तुम विकल हो विकल जितनी
मृदु - मिलन की कामना,
शात हो तुम शात जितनी
है विरागी भावना।

•

तुम करुण हो करुण जितनी
विफल - आँसू - धार है,
तुम निठुर हो निठुर जितना
मृत्यु का प्रहार है।

• •



मजबूरी मजबूर हुई

:

जब मुझमे मेरी मजबूरी मजबूर हुई,
तब जीवन का सामीप्य, कल्पना दूर हुई।

यह भावो के मृदु-सुमन, कल्पना की माला,
क्षण भर मे हो जाती है कैसे चूर अरे ?
यह कैसा है ससार, यहाँ का अपनापन,
अपना ही हो जाता जब पल मे दूर अरे ?

यह असुवन की बरसात, सजलता पीडा की,
क्या उससे भी ना भीग सका रे तेरा मन ?
ये जलती सी आहे, अन्तर की चीत्कार,
क्या कर न सकेगी ये तेरे मन को उन्मन ?

फिर कैसे समझूँ तुमको किसलय से कोमल,
जब तेरे सम्मुख आग मनुज की चूर हुई !

तुम तन मे, मन मे और विश्व के प्रतिकण मे,
फिर भी क्यो रहते हो तुम प्रतिपल दूर अरे ?
क्या तुम्हे गर्व या लज्जा आती अपनो से,
या हेय समझ, ना कर सकते मजूर अरे ?

यह पवन बताती तेरे मन की चचलता,
यह साँस सुनाती है तेरा गुन-गुन गाना,
यह रात अधेरी तेरे मन की श्यामलता,
तेरी निर्ममता इन तारो का छिप जाना !

फिर भी तुम कैसे करुणा-सिंधु औ दीन-बन्धु,
इस रहस्य-जाल की परछाई ना दूर हुई !

यह सूरज का आना चदा का छिप जाना,
तेरी गति का करता मुझको सकेत अरे !
कितने आये, मुस्काये, मुरझाये रज मे,
तू खेल रहा पर किससे तेरा हेत अरे ?

मत बन कठोर निर्मम, ओ जग के अविनाशी !
तेरी करुणा पर टिका हुआ यह जग नश्वर,
अपनो से हार-जीत, कैसी यह नादानी,
अपनी बदनामी का भी नही तनिक सा डर !

यह मेरे उर का कोष, लुटाते है आँसू,
फिर भी क्यो तेरी निर्ममता ना चूर हुई ?

यह ताप सूर्य का, तेज तुम्हारे ही मन का
जिसमे शीतलता, कोमलता का नाम नही,
यह जो शशि मे है दाग, भेद तेरे उर का
जो कहना शुभ्र सरलता का कुछ काम नही !

यह जड़ता मे जो बसी हुई है स्थिरता,
बतलाती तेरा राज्य-नियम भी है स्थिर,
अविरल आँसू - सरिताये, पीडा की झंझा,
ना तनिक डिगा पाये करुणा के अगणित शर।

फिर कैसे कह दूँ, तुम सौरभ से मृदुल मधुर,
जब तुम से अब तक जग-कटुता ना दूर हुई।

मानव को मिल न सका मानवता का मेला,
इस धरती पर तो आज पनपती दानवता,
यह भौतिकता का काल और विज्ञान-देव,
फिर कैसे हो नर देव, नारियाँ देव-सुता ?

चहुँ ओर लगी है आग वासना, तृष्णा की,
जिसमे है झुलस रही अन्तर की शीतलता,
अभिशाप बन गई तृप्ति आज के मानव की,
इन सघर्षो मे कुचल रही उर-कोमलता।

फिर कैसे समझूँ तुम पतितो के उद्धारक,
जब तुममे ही यह पाप-ज्वाल ना दूर हुई।

०००००



डूबी जाती तरी····!

:

ज्यो डूबी जाती तरी किनारा दूर-दूर,
ज्यो थकते हैं ये श्वास जिन्दगी चूर-चूर !

पल क्षण थी लघु लहरो पर यह जीवन-तरणी
डगमग डगमग सी जाने कब से डोल रही,
पीडा के प्रबल झकोरे औ दुख की आँधी
प्रतिपल उसकी ताकत की थाह टटोल रही !

यह किस्मत की पतवार और मन का माँझी
ले अनजानी अज्ञात दिशा मे सदा बढी,
उर-उलझन के उद्वेग निराशा की झझा
भावो के भाटा-ज्वारो पर वह गिरी-चढी !

इस ससृति-सागर मे सघर्षो का मेला,
जो थक जाये मन-माँझी तो तट दूर-दूर !

विश्वास सदा विश्वास रहा जो मानव मे
तो स्वर्ग सदा उसके चरणो पर उतर बसा,
जो डोल उठा विश्वास धैर्य का सिंहासन
तो उसी भरोसे ने बंधन बन उसे कसा !

मजबूरी की कारा मे भी जो चीख उठा
तो उसका अन्तर भी विद्रोही बन बैठा,
उसका अभिमान सिसकता रोता पूछ रहा—
रे पागल ! अब तक किसके बल पर था ऐंठा ?

यदि आज हार कर अपनी ही कमजोरी से,
अन्तर ने पूछा, क्यो रोता किसका कसूर ?

मेरी मुस्कानो पर जगती को हुई डाह
मेरे रोदन पर भी यह जग तो मुस्काया,
मानव के इन अनमोल आँसुओ की कीमत
किसने कब सोची, किसने इसे समझ पाया !

बन गई बसन्ती मारुत ये जलती आहे
जिसमे जीवन का उपवन खिल कर मुरझाया,
आँसू-धारा ने सींचा करुणा का पादप
जो संसृति की छाया हित प्रतिकण पर छाया !

नैराश्य वेदना की झंझा औ आँधी मे,
मृदु मंजुल आशा-नीड हो गया चूर-चूर !

यह पूछ रहा मेरा मन तुमसे अभिमानी !
तुम संसृति के दर्शक हो या उसके स्वामी ?
कितनी तरियाँ बह चली और कितनी डूबी
उनकी विनाश-पीडा क्या तुमने पहचानी ?

इस ससृति-सागर का है दूर किनारा क्यो
शायद उस पार लगा होगा तेरा डेरा,
बतलादे तूने क्या ऐसा अपराध किया
जिससे माया का तुझ पर लगा कठिन पहरा ?

चलना ही क्या मानव को शेष रह गया है,
जो थके चरण तो मजिल होती दूर-दूर ?

मानव-अन्तर की विकल व्यथा की ये चीखे
क्या कभी नहीं तेरे कानो को छू पाती ?
फिर तू कैसा जग का सृष्टा-दृष्टा-रक्षक
मानव की मृदुल भावना जब कुचली जाती ?

कितनी ही मिटती तरियो के सगीत सुने
कितने ही झरते सुमनो को तुमने देखा,
कितने ही प्राण-प्रदीपक जल कर बुझे सदा
तूने क्या अब तक नही किया उनका लेखा ?

क्या करे साधना मानव अपने ही मन की,
जब साध्य स्वय साधक से भगता दूर-दूर ?



विश्वास

:

बढ़ने दो मेरे कदम अजानी राहों में
पथ-धूलि पथ-दर्शक बन पथ दिखा देगी,
जाने दो मम जीवन-नौका मझधारा मे
लहरे ही उसे किनारा तभी दिखा देगी !

मेरे अन्तर की पीडा को पल जाने दो
पीडा जीवन-क्रीड़ा बन मुझे भुला देगी,
बहने दो मेरी अविरल आँसू-धारा को
धारा कटुता-कारा से मुक्ति दिला देगी !

धसने दो मेरे पाँव व्यथा के कीचड मे
मम करुणा ही कीचड मे कमल खिला देगी,
मुझको पाषाणों को भगवान समझने दो
मम भाव-साधना उनको देव बना देगी !

उलझन को मेरे कण कण पर छा जाने दो
उलझन ही सुलझन बन कर मुझे पुकारेगी,
कस जाने दो मम चरण जगत-जजीरो मे
कड़ियें कलियें बन पद मेरे पुचकारेगी !

पापो के हिम-खडो को पथ रोकने दो
मेरी पावनता से वे जल बन जायेगे,
सरिता की सरल धार मे दुर्गम शैल-शृ ग
पाषाण धूलि बन खुद सग मे बह जायेंगे।

तपने दो मेरा हृदय व्यथा की ज्वाला मे
ज्वाला ही उसको कुन्दन कर चमका देगी,
रगडे खाने दो उसे विफलता-रोडो से
रगडे ही उसको हीरा खरा बना देगी।

मिटने दो मुझको मेरी दुर्बलता से तुम
इक दिन यह दुर्बलता भी बल बन जायेगी,
पिट जाने दो मुझको हारो की चोटो से
ये हारें इक दिन विजय-हार पहनायेगी।

दुख-दुविधा मे जन्मी दुविधाओ ने पाला
दुविधाओ ने मुझको अपना सा कर डाला,
क्यो डरते हो इन श्यामल व्यथा-घटाओ से
मेरी आभा से चमकेगा यह तम काला।

ज्यो सूरज की किरणो से मिटता अधकार
यो हृदय-ज्योति से जग का तम हट जायेगा,
चाहे कितने वादल आ विद्युत् को वाँधे
उसकी आभा से बादल खुद फट जायेगा।

०००००



होड़

:

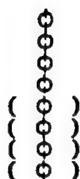
है होड लगाती मेघो से ये आँखे
आँसू-जल से भर आज बरस जाने को,
मेरा दुख करता होड़ निशा के तम से
इस जगती के कण कण पर छा जाने को।

टकराती मेरी आश दामिनी से अब
क्षण भर जीवन-नभ मे आ छिप जाने को,
पर फिर भी मम विश्वास अडिग, अविचल है
अम्बर मा विस्तृत जीवन ढक जाने को।

सध्या सी झिलमिल मधुर कल्पना मेरी
नव मधुर अरुणिमा सी मेरी अभिलाषा,
मध्यान्ह बनी मेरे अन्तर की ज्वाला
तममय रजनी सी नीरव करुण-निराशा।

चातक-पिपास से प्रवल पिपासा मेरी
जिसमे युग युग तक के सयम का बल है,
है आज हारती चिता दग्ध चिता से
मेरी करुणा से सागर आज सजल है।

यह कटी डोर सी आज चल रही साँसे
तन की पतग गिरने को वनी विकल है,
है मौत तुल्य या मौत जिन्दगी मेरी
जीवन है या जीवित रहने का छल है ?



मुक्तक



और पैमाने सभी बेकार है,
अन्य नापो का तो जड आधार है;
एक अपने ही हृदय के नाप से,
नाप सकते हम निखिल ससार ये ।

•

कह रहा यह साध्य-रवि ढलता हुआ,
यो सदा चढ कर उतरना है अटल,
फूल चढ तरु के शिखर पर हम दिया,
अत मे तो धूल का आँचल मृदुल ।

•

चिर दुखो की ठोकरो मे चूर होकर,
भूल कर इस जिन्दगी का दाँव हारा,
विश्व के आलोक के हित चमकने का,
कह रहा आकाश से टूटा सितारा ।

•

हृदय की गहराइयो को नापने,
यत्र यह विज्ञान दे पाया नही;
एक करुणा-यत्र से तुम नाप लो,
स्नेह है या स्वार्थ की छाया कही ?

•

गीत क्या गाऊ भला मुख खोल मैं,
जब कि मेरे गीत ही तव राग है,
आँसुओ से क्या बुभाऊ उर जलन,
जब कि अन्तर मे तुम्हारी आग है !

••



मेरा परिचय

:

मै सदा तुम्हारे पद-पद्मो की ही रज हूँ,
मै सदा तुम्हारे उच्छ्वासो की मृदुमाला ।

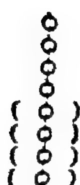
मै सरिता हूँ बस जिसने पकडी एक राह
उस पथ पर नित पाषाण तोड बढती जाती,
सागर का मूक निमन्त्रण गति मे बल भरता
पथ की असख्य बाधाये नही रोक पाती ।

मै चचल चपला हूँ इस जगती के नभ मे
जो श्यामल नभ के श्याम मेघ-पट मे बसती,
पर जिसे न छू पाती है कोई श्यामलता
जो श्याम घटा को चीर श्वेत-द्युति से हँसती ।

मै भोर-रश्मि जिसने लाखो को हर्षाया
पङ्कज ने हाथ पसारे जिसको पाने को,
जिसके तपने से धरा तपी, बादल उमडे
सध्या को जो आकुल रवि मे मिल जाने को ।

सुन्दर, शीतल लाखो मुस्काते मृदुल जलज
जिसको पल भर भी अपने मे अटका न सके,
लाखो हिम-गिरि पर्वत औ' उन्नत शैल-शिखर
सब उससे हारे, पथ उसका भटका न सके।

मै सलिल-बूंद जो नित सागर मे ही रहती
रवि के आतप से बेबस हो नभ मे छाई,
बन श्याम घटा नभ मे मडराई आकुल-सी
पावस मिस फिर सागर मे आकर इठलाई।





तुम

:

मेरे इस सूने जीवन मे
तुम आशा बन कर आते हो।

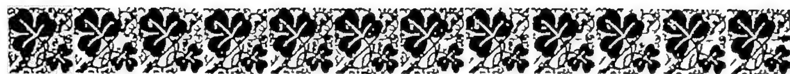
आजाती जब नैराश्य-निशा
छा जाता है तम आस पास,
जीवन का पथ छिप छिप जाता
हो जाता मेरा मन उदास,
ऐसे मे तुम राका-शशि से
आ मद मद मुसकाते हो।

जीवन के इस सूने नभ मे
घनघोर घटा छा जाती है,
सजधज कर नूतन साज सजा
जब अमा-निशा आ जाती है,
ऐसे मे तुम खद्योत बने
जगमग जग ज्योति जगाते हो।

जीवन के नीरव सपनो को
दुख-शिशिर शून्य कर जाता है,
दावा की जलती लपटो मे
जव मृदु उपवन जल जाता है,
ऐसे मे तुम ऋतुराज वने
कोयल-सी कूक सुनाते हो।

आतुर जग के सव साज क्षणिक
नश्वरता का नर्तन होता,
यह देख चकित हो मेरा मन
जग की नादानी पर रोता,
तव तुम्ही प्रेरणा-राग छेड
नवजीवन-गीत सुनाते हो।





तुम

:

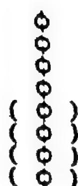
मेरे इस सूने जीवन मे
तुम आशा बन कर आते हो ।

आजाती जब नैराश्य-निशा
छा जाता है तम आस पास,
जीवन का पथ छिप छिप जाता
हो जाता मेरा मन उदास,
ऐसे मे तुम राका-शशि से
आ मद मद मुसकाते हो ।

जीवन के इस सूने नभ मे
घनघोर घटा छा जाती है,
सजधज कर नूतन साज सजा
जब अमा-निशा आ जाती है,
ऐसे मे तुम खद्योत बने
जगमग जग ज्योति जगाते हो ।

जीवन के नीरव सपनो को
दुख-शिशिर शून्य कर जाता है,
दावा की जलती लपटो से
जब मृदु उपवन जल जाता है,
ऐसे मे तुम ऋतुराज बने
कोयल-सी कूक सुनाते हो।

आतुर जग के सब साज क्षणिक
नश्वरता का नर्तन होता,
यह देख चकित हो मेरा मन
जग की नादानी पर रोता,
तब तुम्ही प्रेरणा-राग छेड
नवजीवन-गीत सुनाते हो।





जीवन क्या ?

:

वह जीवन का पथ है सूना
जिसमे काँटो के तार नही,
वह मानव का मानस सूना
जिसमे उठते उद्‌गार नही ।

है धूलि-पिण्ड वह मानव-उर
जिसमे यदि दहकी आग नही,
वह जीवन का सगीत शून्य
जिसमे करुणा का राग नही ।

वे काच-खण्ड सी आँखें है
जिनमे आँसू की धार नही,
वह है पशुओ का-सा जीवन
जिसमे असीम सा प्यार नही ।

वह निद्रा क्या है जडता है
जिसमे स्वप्निल-ससार नही,
वह विजय-हर्ष, क्या विजय-गर्व
जिसने देखी यदि हार नही !

उस सत्य प्रेम मे सिद्धि कहाँ
जिसमे वियोग का स्वाद नही,
वह जीवन क्या बस मौत कहो
जिसमे पीडा अवसाद नही !

उस जीवन मे आनन्द कहाँ
जिस पर नैराश्य-प्रहार नही,
यदि सूने अधरो के पट पर
आहो ' की वन्दनवार नही !

यदि सही न पीर प्रतीक्षा की
उस पाने मे कुछ सार नही,
जिसको न व्यथा के नयन मिले
वह देख सका ससार नही !





जिन्दगी भी मृत्यु-गीत गा रही

:

यह जिन्दगी भी मौत बनती जा रही
तो सत्य को साकार मैं कैसे करूँ ?

जो जिन्दगी की राह पर बढे कदम
तो कल्पना कुसुम बिछाती आ गई,
जो जिन्दगी को दुख-तिमिर ने ढक दिया।
तो आश अरुणिमा लुटाती आ गई,
जो चौंधिया गये नयन भ्रमित हृदय
तो फूल देख पथ से भटक गई,
वे फूल धूल, धूप बनी अरुणिमा
रुके कदम मैं शूलो मे अटक गई।

ये सत्य ही जो स्वप्न बन बिखर गया,
तो स्वप्न का एतबार मैं कैसे करूँ ?

यह कल्पना जो कल्पना ही रह गई
तो रूप बढ गया, बहुत निखर गया,
जो कल्पना भी सत्य-सुमन बन गई
तो रूप सब पराग बन बिखर गया,
ये भावना की साधना ही है अमर
यो तो सकल विश्व नाशवान है,
ये शाप, वर' सकल मनुज की आस्था
यो तो जिन्दगी भी शाप-दान है।
जो फूल भी तो शूल बन के चुभ गये,
तो शूल का तिरस्कार मैं कैसे करूँ ?

यह बढ रहा है अनुभवो का कोष ज्यो
तो घट रही है जिन्दगी की यह कथा,
ज्यो लुट रहा है आश का चमन यहाँ
तो बढ रही अभाव-सुरभि सी व्यथा,
जो शून्य हो के उर सिसकता सो गया
तो लेखनी बेताब होके चल पडी,
जो मूक हो गई जुबाँ उलझ गई
तो अश्रुधार हो विकल मचल पडी।
ये भाव मेरे बन गये अभाव चिर,
अभावो से भी प्यार मै कैसे करूँ ?

ये लुट रही है जिन्दगी की हाट तो
ये मूल्य के बिना ही माल जा रहा,
मै कर रही हिसाब तोल-जोख क्या
ये काल का ग्राहक तो निकट आ रहा,

अब न पड अधिक नफे के फेर मे
इस जगत से कौन नफा पा सका ?
तृण ही लेके स्वर्ण दे गये सभी
सौदा न किया वही कुछ ले जा सका !
ये आँसुओ के सत्य मोती लुट रहे,
जड-स्वर्ण से सिगार मै कैसे करूँ ?

यह वेदना सजा रही हृदय यहाँ
विफलता बजाती भाव-तार है,
जो न होता विश्व मे विषाद-स्वर्ण
तो शून्य जिन्दगी का था शृंगार ये,
तो वेदना को विलग कैसे कर बढ़ूँ
जब कि सुख है शत्रु, दुख ही मीत है,
शून्य श्वासो का रहेगा मूल्य क्या
जब कि वेदना ही इनमे गीत है !
आश बन गई निराश-कालिमा,
निराश का परिष्कार मै कैसे करूँ ?

हार औ व्यथा के शूल-जाल तो
जिन्दगी की राह मे विराम है,
किन्तु फिर भी रुक न पाती जिन्दगी
एक क्षण भी ठहरना हराम है,
रुक न जायें चरण विश्व-पथ मे
इसलिये ही जिन्दगी सदा चली,
जो थका, रुका मनुज का कारवा
तो जिन्दगी भी मौत बन के बढ चली !

यह जिन्दगी भी मृत्यु-गीत गा रही,
तो मृत्यु का विचार मै कैसे करूँ ?

रे कौन सुन सका किसी की वेदना
औ कौन किसकी पीर को बँटा सका ?
है दुख दयालु एक ऐसा विश्व मे,
जो सोचने को कुछ समय जुटा सका,

यो जिन्दगी के खेल खेल मे सदा
ये दाँव कामना के हारते रहे,
न आग ही झुकी, न कामना रुकी,
ये भाव चोट खा कराहते रहे।

यह जीत मेरी हार-गीत बन गई,
तो हार से दुलार ना कैसे करूँ ?



मुक्तक



मेरे जीवन का सूनापन
बन गया हृदय की चहल पहल,
शत्-शत् ससार सृजन करता
आशा का गिरता हुआ महल।

•

पद चाप तुम्हारी बनी ध्यान
तव याद बनी अस्तित्व ज्ञान,
क्या विरह मिलन मे भेद करूँ ?
तेरा अभाव ही हृदय-गान।

•

इन तुच्छ अभावो ने मुझको
अनुपम भावो का कोष दिया,
मेरी हारी दुर्बलता ने
मुझको डटने का जोश दिया।

•

मैं आज अकेली हूँ कैसे
तव याद न पल भर दूर हुई,
निर्मम कैसे, निष्ठुर कैसे
जब खुद से ही मजबूर हुई।

•

मेरे पागलपन ने मुझको
अब तक इसान बनाया है,
मेरी भोली भावुकता ने
मेरा ईमान बचाया है।

••

चढ़ने वाले दीवानों को, है कौन, कहो, कब रोक सका?
तम की असीम श्यामलता से, दीपक का मस्तक नहीं झुका।

? ? ?

:

कौन, कहाँ, किस दिशि मे प्रच्छन्न
कोई मुझको तनिक बतादे ?

श्वासो की राहो पर चलता
उर मे दीपक सा नित जलता,
दुख मे आँसू बन कर ढलता
पल पल परिवर्तन बन छलता,

मेरे अकुलाने कानो को
उसका कुछ सदेश सुनादे !

सघन तिमिर मे क्षीण प्रकाश
अगणित निराशा मे मृदु आशा,
क्षण क्षण गिरने का विश्वासा
जो है भाग्य-खेल का पासा,

मेरे विकल दृगो को कोई
उसका शुभ दर्शन करवादे !

पथ-दर्शक पाथेय वही है
अंतिम जीवन-ध्येय वही है,
प्यासे उर का पेय वही है
गद्य वही है, गेय वही है,

उस सूनेपन के सरगम को
कोई मृदु झंकार सुनादे !

खोज कहां उसको पाऊँगी
या निज को खोती जाऊँगी ?
कौन साधना होगी ऐसी
जिसमे मै भी खो जाऊँगी ?

कौन पथ पहुंचाता उस तक
इतना कोई भेद बतादे ?

दुनियां की दुविधा के धागे
उलझे कदम कदम के आगे,
मेरे कुंठित भाव अभागे
कह कब, नई चेतना जागे ?

जिसके बल पर चरण बढ चले
मुझको मंजिल तक पहुँचादें !

ooooo



मत पूछो मुझ से आज····!

:

मत पूछो मुझ से आज विगत की यह गाथा !

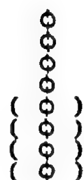
वह जीवन का सुख-स्वर्ग
सुधा की मधुर धार
वह हर्ष और उल्लास
मलय की मृदु बयार
जिनके शीतल स्पर्शों से मन मुस्काता !

वह नादानी का नीड
आश का प्रथम भोर
अलबेलापन अनुराग
स्नेह की किरण कोर
जिनके आँचल में मचल मचल उर इतराता !

मृदु-सौरभ सी मुस्कान
मुकुल सी अभिलाषा
हरियाली सा उन्माद
खगो सी जिज्ञासा
जिस उपवन मे आनन्द स्वय हो हर्षाता ।

आँधी-से अल्हड भाव
मेघ सा सरस हृदय
आँसू पीडा अवसादो-
से न तनिक परिचय
भोलापन भोला भ्रमर बना था मडराता ।

जिसकी सुधि करके
वेसुध हो जाता अन्तर
वाणी आहो मे वद्ध
उमडते दृग निर्झर
मेरे उर का अवसाद स्वय जलता जाता ।





मेरा दुख

:

मेरा दुख मुझ पर आज तरस खाता है !

मेरे अन्तर की ज्वाला
जल बन जाती
क्रन्दन के स्वर मे
करुणा वीण बजाती

ज्वाला का जल आँसू बन ढल जाता है !

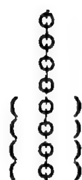
जलती सी आहें
बनती मलय-झकोरे
आँसू-सरिता के पुलिन
दृगो की कोरे

पग-पग पर पागलपन-स्मर लहराता है !

मृदु-सौरभ सी मुस्कान
मुकुल सी अभिलाषा
हरियाली सा उन्माद
खगो सी जिज्ञासा
जिस उपवन मे आनन्द स्वय ही हर्षाता !

आँधी-से अल्हड भाव
मेघ सा सरस हृदय
आँसू पीडा अवसादो-
से न तनिक परिचय
भोलापन भोला भ्रमर बना था मडराता !

जिसकी सुधि करके
वेसुध हो जाता अन्तर
वाणी आहो मे वद्ध
उमडते दृग निर्झर
मेरे उर का अवसाद स्वय जलता जाता !





मेरा दुख

:

मेरा दुख मुझ पर आज तरस खाता है।

मेरे अन्तर की ज्वाला
जल बन जाती
क्रन्दन के स्वर में
करुणा वीणा बजाती

ज्वाला का जल आँसू बन ढल जाता है।

जलती सी आहे
बनती मलय-झकोरे
आँसू-सरिता के पुलिन
दृगो की कोरे

पग-पग पर पागलपन-सर लहराता है।

अन्तर मे इतराता
करुणा का सागर
चिर व्यथा-कूल
आशा का खाली गागर

आघात मरालो का वृंद मँडराता है!

नैराश्य-जलज करते
शोभित जीवन-सर
मँडराते जिन पर
दुख-दुविधा के मधुकर

सूनापन सौरभ बन कर छा जाता है!



भुलावा

:

आज मैं खुद को भुलावा दे रही हूँ
मृत्यु को हँस-हँस बुलावा दे रही हूँ।

कौन कहता है कि मैं कविता बनाती ?
कौन कहता है कि मैं भी गीत गाती ?
सत्य पूछो तो बता दूँ भेद अपना
कठ के स्वर और कागज, लेखनी से—

उलझने अपने हृदय की व्यक्त करके
जिन्दगी को मैं भुलावा दे रही हूँ।

आँसुओ के मोतियो की हाट मेरी
आज देखो व्यर्थ लुटती जा रही है,
और सुख-दुख का करूँ अनुमान कैसे
भावना की श्वास घुटती जा रही है,

भूलती तो जा रही हूँ ज्ञान अपना
किंतु औरो को सुझावा दे रही हूँ।

अन्तर मे इतराता
करुणा का सागर
चिर व्यथा-कूल
आशा का खाली गागर
आघात मरालो का वृंद मँडराता है।

नैराश्य-जलज करते
शोभित जीवन-सर
मँडराते जिन पर
दुख-दुविधा के मधुकर
सूनापन सौरभ बन कर छा जाता है।





भुलावा

:

आज मैं खुद को भुलावा दे रही हूँ
मृत्यु को हँस-हँस बुलावा दे रही हूँ!

कौन कहता है कि मै कविता बनाती ?
कौन कहता है कि मैं भी गीत गाती ?
सत्य पूछो तो बता दूँ भेद अपना
कंठ के स्वर और कागज, लेखनी से—

उलझनें अपने हृदय की व्यक्त करके
जिन्दगी को मैं भुलावा दे रही हूँ!

आँसुओ के मोतियो की हाट मेरी
आज देखो व्यर्थ लुटती जा रही है,
और सुख-दुख का करूँ अनुमान कैसे
भावना की श्वास घुटती जा रही है,

भूलती तो जा रही हूँ ज्ञान अपना
किंतु औरो को सुझावा दे रही हूँ!

आज प्राणों की अपरिमित प्यास मेरी
प्यास से ही आज बुझती जा रही है,
विश्व की सुलझी हुई नियमावली मे
जिन्दगी मेरी उलझती जा रही है,

जिन्दगी की राह पर तो बढ रही पर
मृत्यु को प्रतिपल बुलावा दे रही हूँ!



मुक्तक



तुम न आते पर तुम्हारी याद तो रुकती नही
मिट चुके अरमान लेकिन आश तो झुकती नही,
'स्नेह' विन भी स्नेह का यह दीप जलता है सदा
तुम कहो क्यो आँधियो से वर्तिका बुझती नही ?

•

हर मानव को हर मानव प्रीत दिखाता है
हर दानव को हर मानव बुरा बनाता है,
पर दनुजो को भी गले लगा मानवता से
कोई विरला ही उनको मनुज बनाता है ।

•

कहते है जग के लोग जुटा कर विश्वासा
'भगवान खोजने मनुज-देह हम पाते हैं',
भगवान विश्व के करण प्रतिकरण मे व्याप्त सदा
पर सच्चे मानव कही कही मिल पाते है ।

•

हर श्याम मेघ मे विद्युत श्वेत दमकती है
हर चिर निराश मे आशा-कली महकती है,
पर आशा को विश्वास बनाने की क्षमता
इस वसुन्धरा पर कही किसी मे दिखती है ।

•

यो तो सबको ही मित्र बहुत मिल जाते है
सब ही अपनो पर स्नेह बहुत दर्शाते है,
पर केवल तन ना, मन को सच्चा स्नेह करे
वे मीत जगत मे खुश-किस्मत ही पाते है !

••

आज प्राणो की अपरिमित प्यास मेरी
प्यास से ही आज बुझती जा रही है,
विश्व की सुलझी हुई नियमावली मे
जिन्दगी मेरी उलझती जा रही है,

जिन्दगी की राह पर तो बढ रही पर
मृत्यु को प्रतिपल बुलावा दे रही हूँ !



मुक्तक



तुम न आते पर तुम्हारी याद तो रुकती नही
मिट चुके अरमान लेकिन आश तो झुकती नही,
'स्नेह' बिन भी स्नेह का यह दीप जलता है सदा
तुम कहो क्यो आँधियो से वर्तिका बुझती नही ?

•

हर मानव को हर मानव प्रीत दिखाता है
हर दानव को हर मानव बुरा बनाता है,
पर दनुजो को भी गले लगा मानवता से
कोई विरला ही उनको मनुज बनाता है।

•

कहते हैं जग के लोग जुटा कर विश्वासा
'भगवान खोजने मनुज-देह हम पाते हैं',
भगवान विश्व के कण प्रतिकण मे व्याप्त सदा
पर सच्चे मानव कही कही मिल पाते हैं।

•

हर श्याम मेघ मे विद्युत श्वेत दमकती है
हर चिर निराश मे आशा-कली महकती है,
पर आशा को विश्वास बनाने की क्षमता
इस वसुन्धरा पर कही किसी मे दिखती है।

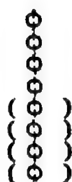
•

यो तो सबको ही मित्र बहुत मिल जाते है
सब ही अपनो पर स्नेह बहुत दर्शाते है,
पर केवल तन ना, मन को सच्चा स्नेह करे
वे मीत जगत मे खुश-किस्मत ही पाते हैं !

••

आज प्राणो की अपरिमित प्यास मेरी
प्यास से ही आज बुझती जा रही है,
विश्व की सुलझी हुई नियमावली मे
जिन्दगी मेरी उलझती जा रही है,

जिन्दगी की राह पर तो बढ रही पर
मृत्यु को प्रतिपल बुलावा दे रही हूँ।



मुक्तक



तुम न आते पर तुम्हारी याद तो रुकती नही
मिट चुके अरमान लेकिन आश तो झुकती नही,
'स्नेह' बिन भी स्नेह का यह दीप जलता है सदा
तुम कहो क्यो आँधियो से वर्तिका बुझती नही ?

•

हर मानव को हर मानव प्रीत दिखाता है
हर दानव को हर मानव बुरा बनाता है,
पर दनुजो को भी गले लगा मानवता से
कोई विरला ही उनको मनुज बनाता है ।

•

कहते हैं जग के लोग जुटा कर विश्वासा
'भगवान खोजने मनुज-देह हम पाते हैं',
भगवान विश्व के कण प्रतिकण मे व्याप्त सदा
पर सच्चे मानव कही कही मिल पाते हैं ।

•

हर श्याम मेघ मे विद्युत श्वेत दमकती है
हर चिर निराश मे आशा-कली महकती है,
पर आशा को विश्वास बनाने की क्षमता
इस वसुन्धरा पर कही किसी मे दिखती है ।

•

यो तो सबको ही मित्र बहुत मिल जाते हैं
सब ही अपनो पर स्नेह बहुत दर्शाते है,
पर केवल तन ना, मन को सच्चा स्नेह करें
वे मीत जगत मे खुश-किस्मत ही पाते है !

••



विनय

:

तेरी दिखाई राह पर
मै आज प्रतिपल बढ रही,
तू जो लगाता सीढियाँ
मै तो उन्ही पर चढ रही !

मुझको न है मालूम
जायेगा किधर यह रास्ता,
जग ने किनारा कर लिया
अब तो तुम्ही से वास्ता !

बढ रही हूँ आज लेकिन
राह मेरी है अजानी,
गढ रहे प्रतियाम अविरल
करुण सी मेरी कहानी !

हँस रहे है ये अधर
पर पलक मे प्रच्छन्न पानी,
इन व्यथा की ठोकरो मे
मिल रही तेरी निशानी !

छन्द जितने बन रहे हैं
पर सभी वे है अधूरे,
कौन जाने क्या कभी भी
हो सकेंगे गीत पूरे ?

लिख दिया जो लिख दिया
उनको बदलना आज कैसा,
बिन लिखे उच्छ्वास के मिस
भेजती तुमको संदेशा !

आज फिर भी मूक हो तुम
मूक मेरा अश्रु-पानी,
मूक सी यह लेखनी
कुछ मूक सी लिखती कहानी !

विनय अन्तर कर रहा है
आज केवल एक बस,
शुष्क इस मरु से हृदय मे
स्नेह, करुणा हो सरस !



उन्मन मन

:

उन्मन उन्मन कुछ मेरा मन
गाता है किसके गीत आज ?

किसकी छाया है ढाँक रही
अन्तस्तल का ससार अखिल ?
किसकी सुधि मे बेसुध होकर
ये मचल रहे आँसू अविरल ?
अन्तर मे प्रतिपल पलती है
पीडा सी किसकी प्रीत आज ?

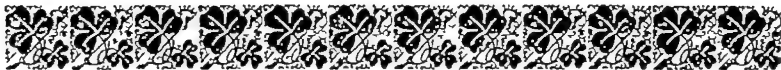
अनजाने किसकी राहो मे
आँखे रहती हैं सदा विकल ?
ना जाने किस अनुभूति से
चित होता जाता है चचल ?
चिता की चपल चिगारी भी
लगती क्यो मुझको शीत आज ?

आशा के उजडे उपवन मे
क्यो लहराता कोयल का स्वर ?
मेरे इस प्रस्तर-से उर मे
क्यो फूट पडा करुणा-निर्भर ?
कुछ समझ नही आता मुझको
अपने अन्तर का गीत आज !

चचल-चपला सी चमक उठी
जीवन-नभ मे इच्छा रानी,
वस उसकी आँख-मिचौनी मे
उर-धन से ढलता नित पानी,
फिर भी मैं वढी अकिंचन सी
गाती उन्नति के गीत आज !

जव ढहक गया वालू का घर
गुडियो का मेला विखर गया,
प्रतियाम जुटाते ममता-धन
शृ गार हृदय का निखर गया,
गिरने के साज सजाने मे
मैंने मानी है जीत आज !





आँसू

:

ये दो अकुलाये आँसू ही
मेरे जीवन के मीत आज ।

अरमानो के अगारे बन
जलती जब जीवन की बेली,
भीषण ज्वाला अभ्यन्तर की
आहो मे करती अठखेली,

नीरवता औ नीरसता मे
रोदन ही चिर सगीत आज ।

जग की निर्ममता को विलोक
उर-सागर की उठती हिलोर,
करुणा की कोमल लहरो से
जीवन का तट नित सरावोर,

कानो से सुना नही जाता
मिटती तरियो का गीत आज ।

चिर शून्य बना है हृदय-गेह
दुख-छाया के है बने द्वार,
विरहा-उपवन के सपनो से
नित निखर रहा उसका शृंगार,

उसमे शोभित सब सामग्री
सपनो सा मधुर अतीत आज !

पाने खोने की उलझन से
अब मुक्त बना मेरा अन्तर,
शुचि-नेह-वृक्ष को सीच रहे
अविरल ये दो निर्मल निर्झर,

वुझ रही पिपासा पाने की
यह हार बनी है जीत आज !

उत्ताल तरंगें पीडा की
जब उर-सागर का बांध तोड,
पलको के पथ पर मचल पडा
अकुलाते भावो का निचोड,

सुमनो के मधु-रस सा झर कर
रखता जीवन-पथ शीत आज !

जिन्दगी चिराग है !

आज मेरी जिन्दगी चिराग है
जब कि उर-लौ मे तुम्हारी आग है ।

आज मेरी मूक सी मजबूरियाँ
आह का लिहाफ ओढ सो गई,
नियति-लपटे और मरघट विश्व का
राख जैसे आस्था की हो गई,

फिर भी उडती आह की चिन्गारियाँ
चेतना का दे रही आभास रे !
गीत थी वह गीत बन उमड रही
आज यह मेरे हृदय की प्यास रे !

गीत बन गई है शून्य जिन्दगी
जब कि अन्तर-भावना तब राग है !

घुमडते श्यामल घनो ने यह कहा
जो चढा उसको उतरना ही पडा,
कौन है नभ मे बतादो एक भी
जो बिना उतरे सदा रहता चढा,
सूर्य चदा औ सितारे सब ढले
नीलिमा का फिर वही चिर साज है,
कौन कितने सुमन खिले झर गये
विश्व-वन था जो वही तो आज है,
आज मैं खुदको भुलाऊँ क्या भला
जब कि मुझको याद उर की आग है!

शून्य मे सगीत बन कैसे बसूँ
जब कि जीवन शून्य की झकार है,
मै किसी का भी करूँ अपमान क्यो
जब कि ये हर श्वास तव दुत्कार है!
दूर होकर देह की दीवार से
कौन कर पाया हमे कब दूर है?
बूंद चाहे मधुर कटु या म्लान हो
सिधु उसको झेलने मजबूर है!
गीत गाकर मैं सुनाऊँ क्या व्यथा
जब कि करुणा तो तुम्हारी राग है!

आश का विश्वास तो मैं क्या करूँ
जब कि मुझको छल रहा विश्वास है,
और धोखे की शिकायत क्या करूँ
प्रथम छल तो मनुज-उर की प्यास है,

जिन्दगी विश्वास छल का मेल है
भूल कर इसका भरोसा क्या करूँ ।
निकट आती जा रही है मौत जब
जिन्दगी तो दूर हटती, क्यो डरूँ ?

ज्ञान का दीपक सजोऊँ क्या भला
जब कि उर मे पीर का चिराग है ।

कौन कह रहा कि बुझ गया हृदय ?
चिर-व्यथा की वर्तिका तो जल रही,
कौन कह रहा कि शुष्क जिन्दगी ?
अश्रुधार तो तरल मचल रही ।
कौन कह रहा कि जिन्दगी रुकी ?
यह जिन्दगी तो श्वास मे भी चल रही,
आह मे कराह स्वप्न मे विहस
यह पीर मे भी जिन्दगी तो पल रही ।

विश्व को सुरभित बनाऊँ आज क्या
जब कि उर का फूल बिन पराग है ।



मुक्तक



मेरी नादानी ने मुझको
जगती का अनुभव दान दिया,
मेरी अज्ञान-यामिनी ने
जागृति का नवल-विहान दिया !

•

बहते अ सुवन पर बाँध लगा-
देने को विश्व बना आकुल,
पर कब किसने रोका अब तक
यह बहता जीवन-सरिता-जल ?

•

मेरे अन्तर का सूनापन-
ही मम जीवन का मीत बना,
मेरी पीडा का रोदन ही
इन श्वासो मे सगीत बना !

•

बिंध कर काँटो की नोको से
उपवन मे मुस्काया गुलाब,
जल कर दुविधा की ज्वाला मे
उज्ज्वल बनता नित सत्य-राग !

•

मेरे अन्तर की कटुता ही
सूखे जीवन का सार बनी,
मेरी कोमल अनुभूति ही
मम दृढता का आधार बनी !

••



कौन हो तुम ?

:

नित हृदय-गति मे निरन्तर
घडकनो से कौन हो तुम ?

प्राण पर मेरे अधेरा
छा रहा दुख की घटा का,
आज तो दुर्लभ बना है
देखना तेरी छटा का,
श्वास के स्वर मे निरन्तर
सरगमो से कौन हो तुम ?

चिर व्यथा के विकट पथ मे
थक रहे पद आज मेरे,
और खोजे मिल न पाते
धूमिल से पद-चिन्ह तेरे,
शात से, विश्राति मे गति-
से निरतर कौन हो तुम ?

मिट न पाते आज मुझ से
सबल सुधि के चित्र तेरे,
अश्रु बन कर ढुलक जाते
हृदय के ये रत्न मेरे,
आज अविरल यातना मे
सात्वना से कौन हो तुम ?

श्वास भी परिहास करते
आज थकते जा रहे है,
सघन तम मे पथ पर
पद अब भटकते जा रहे है,
चिर-निराशा के तिमिर मे
आश-दीपक कौन हो तुम ?

अश्रु तेरी अर्चना को
ढुलक जाते नित अजाने,
पीर-दीपो से दिवाली
उर लगा है अब मनाने
मौन दीपक की शिखा मे
उजाले से कौन हो तुम ?





मिलन का मूल्य

:

मिलन है चिर विरह का पहला प्रहर,
इस जगत मे मिलन किसका निभ सका ?
साँझ जो निशि-नाथ निशि के सग सजा,
प्रात तक वह क्या गगन मे टिक सका ?

नयन को भी अश्रु-मुक्ता तज चले,
पलक पल भर तिलमिला कर रह गये,
आँसुओ का उर व्यथा से तप गया,
तरल बन कर मूक से वे वह गये !

अधर आहो का क्षणिक सयोग भी,
क्या कभी टिक कर तनिक भी रह सका ?
हृदय से निकला हुआ उद्गार भी,
क्या हृदय के साथ हर क्षण रह सका ?

घन गगन मे चद क्षण आये गये,
टिक न पाता निभ न पाता साथ है,
मेघ जो जल से बने नभ मे उठे,
बूँद बन जल छोड देता साथ है।

फूल पल्लव एक तरु मे जो उगे,
शिशिर-ऋतु मे वे बिछुड जाते सभी,
एक अकुर से बने दो रूप जो,
एक ही कण मे समाये थे कभी।

श्रेष्ठ-विधि ने विपुल चतुराई लगा,
देह प्राणो को दिया जो सग है,
अमिट बन पाया नही वह भी भला,
एक क्षण मे साथ होता भग है।





पावस

:

ये घुमड घुमड आते वादल
यह उमड उमड आता अन्तर,
जल-धार बरसती अम्बर से
नयनो से दो नीरव निर्झर ।

इन श्यामल मेघावलियो के
सग ही सग दुख बरसा जाता,
मेरे जीवन मे आने को
वेबस सुखडा तरसा जाता ।

इस चिर विषाद के आतप से
करुणा की वाप्प उठा करती,
वन सघन कभी टकरा जाती
तव फिर जल-धारा वन ढलती ।

ये मेघ-खण्ड टकरा कर के
करते मेरा उपहास अरे,
हम तो आ पहुँचे चातक हित
तेरी अनबूझी प्यास अरे ।

घन अब न उमड कर आओ तुम
शीतल सी आग जलाने को,
उर मे अगारो की ढेरी
मत बरसो उसे बुझाने को!

जलती है तो जल जाने दो
मेरी मानस की लघु नगरी,
खाली होती तो होने दो
मेरे जीवन की मधु-गगरी!

इस सघन और नीरव तम मे
मुझको दुख-दीप जलाने दो,
मेरे जीवन के चिर सहचर
इन दो असुवन को आने दो!

मै वैरागिन बन कर आई
करुणा के स्रोत वहाने को
इस मानव-तन के पथ से ही
अपना गतव्य पा जाने को!





पावस

:

ये घुमड घुमड आते बादल
यह उमड उमड आता अन्तर,
जल-धार बरसती अम्बर से
नयनो से दो नीरव निर्झर।

इन श्यामल मेघावलियो के
सग ही सग दुख बरसा जाता,
मेरे जीवन मे आने को
बेबस सुखडा तरसा जाता।

इस चिर विषाद के आतप से
करुणा की वाष्प उठा करती,
वन सघन कभी टकरा जाती
तब फिर जल-धारा बन ढलती।

ये मेघ-खण्ड टकरा कर के
करते मेरा उपहास अरे,
हम तो आ पहुँचे चातक हित
तेरी अनबूझी प्यास अरे।

घन अब न उमड कर आओ तुम
शीतल सी आग जलाने को,
उर मे अगारो की ढेरी
मत बरसो उसे बुझाने को !

जलती है तो जल जाने दो
मेरी मानस की लघु नगरी,
खाली होती तो होने दो
मेरे जीवन की मधु-गगरी !

इस सघन और नीरव तम मे
मुझको दुख-दीप जलाने दो,
मेरे जीवन के चिर सहचर
इन दो असुवन को आने दो !

मै वैरागिन बन कर आई
करुणा के स्रोत बहाने को
इस मानव-तन के पथ से ही
अपना गतव्य पा जाने को !





दिवाली के दीप

:

लेकर तेरा सदेश दिवाली आई है,
जिसके प्रति दीपक मे तुझसी निठुराई है।

मुस्काते हैं ये दीप, रुला कर नभ-तारे
है कोटि कोटि कल्पो से जो जग को प्यारे,
उन नभ-दीपो की आभा को वे हर न सके
जो रहे सदा तममय रातो के उजियारे,
पर लजा उन्हे दीपक-पाँते इठलाई है।

जग कहता देखो जलता दीपक वेचारा
लेकिन उसमे जलती वाती का उजियारा,
तिलतिल कर जलता तेल लुटा कर अपनापन
पर दीपक को मिल जाता है गरिमा यश-धन,
वाती की महिमा नही किसीने गाई है।

ऊँची उठती है ज्योति लुटाती उजियाला
नीचे छाया रहता है लेकिन तम काला,
अगणित लाशो से भरा हुआ इसका आँगन
मानो शलभो का स्नेह, शाप की ही ज्वाला,
यह कैसा इसका न्याय और चतुराई है ?

यह अरुणिम स्वर्णिम रगो की मिश्रित ज्योति
मानो है मिलन विरह का मिला हुआ मेला,
ये दीपो की पाँते या जलते अगारे
या अन्तर की करुणा ने दाह-खेल खेला,
धूँए मे आहो की लपटे लहराई है !



मुक्तक



हर कर्म स्वार्थ का हो सार है
पावन तो करुणा-सना प्यार है,
इस जग मे दानी धनी वह बडा
जिसके हृदय के खुले द्वार हैं !

•

मौत मौत चिल्लाते जब तक
दूर रही मरघट-ज्वाला,
मरघट पर भी कभी किसी ने
जपी न मरने की माला !

•

ससार मे है सत्य का बल बडा
है सच्ची तमन्ना कहाँ कब रुकी ?
सूरज से छोटा सा चदा बडा
तो रवि की प्रभा चाँदनी बन झुकी !

•

मेरे अन्तर की करुण पीर
दृग-नीर न बन कर बहलाना
री ठहर भावना की आँधी
ससृति को है कुछ कह जाना !

•

चिर वेदना ही है जग-चेतना
तडपन ही उर मे अमर प्राण है,
भावो अभावो के चिर साथ से
जग मे मिला कब किसे त्राण है ?

••

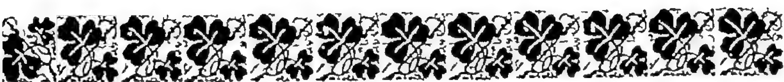
जीवन के क्षण

क्षरा नहीं है एक जीवन का निरर्थक
सार्थक सब जा रहे निज को मिटाके,
दूर मंजिल आज मेरी जो अजानी
बन रहे सब सीढ़ियाँ अविचल जुटाके !

डगमगाती दुख-सुखों की आँधियों में
चिर युगों से नाव जीवन की रही चल,
और उसको उस किनारे से लगाने
जगत्-सागर में बने लहरों से ये पल !

श्वास औ उच्छ्वास जो भी चल रहे हैं
कर रहे निर्माण पथ उस दूर घर को,
और पीड़ा के सभी व्याघात सुन्दर
खोदते उर में विमलतम करुणा-सर को !

जा रही है यह निरर्थक जिंदगी बस
भूल कर अपना अतुल उद्देश्य प्रतिपल,
हो रहा क्षय तेल जीवन का निरन्तर
और बुझने जा रहा यह 'दीप' अविरल !



मत मचलो अश्रु हठीले !

:

मत मचलो अश्रु हठीले यो !

पल-पल जल-जल अस्तित्व मिटा
इक दिन जाना है मरघट को
केवल कर्मो के कुसुमो से
सज जायेगा जीवन-वन तो,
मेरी चिंता 'अनुस्वार' त्याग
इक रोज बनेगी चिता अरे !
उस क्षण, आशा अभिलाषाये
बिखरेगी बन कर अगारे,

पतझर के पात बिखरते ज्यो !

कितना है शेष अभी तक पथ
कितना है गतव्य दूर अरे ?
मुझको इसकी परवाह नहीं
पग-पग पर कटक हैं बिखरे,

चलता है मुझे निरन्तर नित
गति मे साधे विश्वास अमर,
बढना है बाधाओ से लड
चाहे लहरायें दुविधा-सर,

बढती है प्रतिपल मारुत ज्यो !

सागर को लाँघ चलूं डग मे
शैलो से टकराने का बल,
अगारो से खिलवाड खेल
ज्वाला मे पलती हूँ प्रतिपल,
गर्जन मे नर्तन सुने कान
दामिन-द्युति भरलूं पलको मे,
ओले मेरे पथ-सुमन बनें
घन-घटा बाँध लूं अलको मे,

फिर मेरे आँसू आकुल क्यो ?

शकर कर दे ताण्डव-नर्तन
सुर-राज गिराये अविरल जल,
चल जाय प्रलयकारी झझा
धरणी का टूट चले सम्बल,
पर मेरे विश्वासो का बल
पथ मेरा सुगम बनायेगा,
यह अखण्ड साधना का प्रदीप
नित नवल ज्योति बिखरायेगा,

घन-आँचल मे अरुणिम रवि ज्यो !

रज से वन कर रज मे मिलना
इतना सा जीवन-खेल अरे !
जल से वन कर जल मे मिलना
सिखलाती है निश-दिन लहरे,
घन को तज दमक उठी दामिनी
कितना उसका अस्तित्व अरे !
फिर निज अस्तित्व मिटा कर वह
घन में घनमय हो जाती है,

शशि मे छिपती शशि किरणे ज्यो !

सरिता की धारा से पूछा
किस ओर तुम्हे अव जाना है ?
'सागर से उठ सागर मे मिल
फिर सागर ही कहलाना है'
इतना जीवन-उद्देश्य हृदय !
इतनी सी इसकी गाथा है,
मन भूल रहा नादानी मे
भूलो मे समय गँवाता है,

वह है पथ-भटका पथी ज्यो
मत मचलो अश्रु हटीले यो !

चलना है मुझे निरन्तर नित
गति मे साधे विश्वास अमर,
वढना है बाधाओ से लड
चाहे लहराये दुविधा-सर,

बढती है प्रतिपल मारुत ज्यो !

सागर को लॉघ चलूं डग मे
शैलो से टकराने का बल,
अगारो से खिलवाड खेल
ज्वाला मे पलती हूँ प्रतिपल,
गर्जन मे नर्तन सुने कान
दामिन-द्युति भरलूं पलको मे,
ओले मेरे पथ-सुमन बने
घन-घटा बाँध लूं अलको मे,

फिर मेरे आँसू आकुल क्यो ?

शकर कर दे ताण्डव-नर्तन
सुर-राज गिराये अविरल जल,
चल जाय प्रलयकारी झझा
धरणी का टूट चले सम्बल,
पर मेरे विश्वासो का वल
पथ मेरा सुगम वनायेगा,
यह अखण्ड साधना का प्रदीप
नित नवल ज्योति विखरायेगा,

घन-आँचल मे अरुणिम रवि ज्यो !

रज से वन कर रज मे मिलना
इतना सा जीवन-खेल ग्ररे !
जल से वन कर जल मे मिलना
सिखलाती है निश-दिन लहरे,
घन को तज दमक उठी दामिनी
कितना उसका ग्रस्तित्व ग्ररे !
फिर निज ग्रस्तित्व मिटा कर वह
घन मे घनमय हो जाती है,

शशि मे छिपती शशि किरणें ज्यो !

सरिता की धारा से पूछा
किस ग्रोर तुम्हे ग्रव जाना है ?
'मागर से उठ सागर मे मिल
फिर सागर ही कहलाना है'
इतना जीवन-उद्देश्य हृदय !
इतनी सी इसकी गाथा है,
मन भूल रहा नादानी मे
भूलो मे समय गँवाता है,

वह है पथ-भटका पथी ज्यो
मत मचलो ग्रश्रु हटीले यो !



राही

:

भूल मत, अज्ञात पथ, अज्ञात गतव्य
शेष केवल है तुझे तो नित्य बढना !

राह मे राही अनेको ही मिलेगे
मत किसी के साथ पर अभिमान करना,
बढ रहे सब ही विलग, निज मजिलो को
मत किसी की आश पर दो श्वास भरना,

राह के पाषाण, पथ औ रज-कणो पर
तू भले करना भरोसा मान अपना,
क्योकि उन पर ही खडे हो चल रहे हो,
पर कभी विश्वास मानव का न करना !

मिलन के सगीत मे स्वर है विरह का
रो न तू पागल, यहाँ जीवन बिछुडना !

आह से झाड़ू लगा कर पथ बुहारो,
अश्रु-जल से सीच पथ शीतल बनाना,
आँधियो औ ठोकरो मे भी निरन्तर,
एक बढने का नवल आदेश पाना,

तोडते जाये चरण बाधा-शिलायें,
चीर दे विश्वास उलझन-भित्तियो को,
कल्पना के सुमन सुरभित पथ सजाये,
ध्यान सुलझाये जगत की गुत्थियो को !

थक न तू ! यह क्लान्ति तेरी मधुर-कपन,
रुक न तू राही ! तेरा उद्देश्य बढना !

नित्य नूतन हो हृदय की भावनाये,
हर कदम निर्मित करे नव राह तेरी,
पथ मे बिखरे हुये दुख-कटको से,
क्षुब्ध हो जाये न अविचल चाह तेरी !

तू अकेला है, अनोखी राह तेरी,
और वह गतव्य तेरा है अदेखा,
भूल कर विश्राम पल भर को न लेना,
दूर है वह दूर जितनी क्षितिज-रेखा !

पर न कपित हो, अरे गतिशील ये पग
जब कि अपनी शक्ति से ही नित्य बढना !

0-0-0-0-0



जीवन-गीत

:

अपनी इस उन्मन गुनगुन मे
मै जीवन-गीत सुनाती हूँ !

स्वर मधुर सिसकियो का जो है
अनुराग-रागिनी से रजित,
अपने ही उर की धडकन से
आहो का साम्य मिलाती हूँ,
स्मृतियो की बिखरी गाथा
करुणा-कडियो मे जोड जोड,
इस चिर विषाद की भग्न-बीन-
के टूटे तार बजाती हूँ !

पद-पकज-रज-कण मिल न सकें
पर प्रेम-पराग अपरिमित है,
चाहे न दिखो इस जगती मे
जग की सीमाये सीमित है,
मैं उस असीम की अमिट-राग
जो अमर चेतना लाती हूँ,
तेरे पद-पकज की सुधि मे
वन मधुर सुरभि खो जाती हूँ !



अधिकार ?

:

यह कौन कह रहा इस जग पर अधिकार नही ?

जो नही मृत्यु से मिलने को उत्सुक रहते
उनको इस जग मे जीने का अधिकार नही,
जिसने न खेल जीवन का हँस-हँस कर खेला
सच पूछो उसको मरने का अधिकार नही।

जो नही मुस्कराये मुकुलो के साथ कभी
उनको इस जग मे हँसने का अधिकार नही,
जो कभी शूल-आच्छादित पथ पर चल न सका
उसके हित विजय-प्रसूनो का मृदु-हार नही !

गर्मी की ज्वाला से धरती यदि नही तपे
तो मिल न सकेगी वर्षा की मृदु जल-धारा,
जो नही लडे सघर्षो की सेनाओ से
तो कभी न टूटेगी मजबूरी की कारा।

जो आँसू के कण देख विकल हो जाता है
वह केवल कायर-हृदय न कुछ देखा पाया,
जो मुक्ता समझ, सगर्वित हो देता बिखेर
सब खोया, वही किसी से कुछ भी ले पाया ।

जो जल न सका अपने अन्तर की ज्वाला मे
उसको कुछ चमक सके ऐसा अधिकार नही,
उन शून्य सुखो मे सार कभी वह पा न सका
जिसको पीडा से हो न सका कुछ प्यार नही ।

जो पर-आँसू मे अश्रु मिला कर रो न सके
उनको इस जग मे रोने का अधिकार नही,
जो नही मिटा पाये अपने को इस जग पर
उनको इस जग मे रहने का अधिकार नही ।

तुम पूछ रहे क्या मुझसे मेरा भेद अरे ।
मानव-जीवन ही स्वय पहेली अपने मे,
उसको सुलझाना स्वय उलझ जाना उसमे
क्या सत्य लखे, जब स्वय खो रहे सपने मे ।

सुलझा लेगा क्या मानव ससृति की गुत्थी
जब अपने आदि अन्त का उसे विचार नही !



मुक्तक



छिन गया घर द्वार औ आधार जिसका
किंतु फिर भी धूल मे सौरभ लुटाता,
स्वय बन निष्प्राण, सौरभ विश्व को दो
डाल से गिरता सुमन हमको बताता।

•

ज्ञान औ विज्ञान की यह रोशनी
नयन-दृष्टि-पथ का निर्माण है,
एक अपने ही हृदय के नयन से
देख लो ससार औ भगवान रे।

•

हार अपनी बेबसी से दूर होकर
बूँद ने त्यागा विवश हो सिधु प्यारा,
मधुर बनने का मुझे सदेश देता
बूँद का भू सीचता यह सलिल खारा!

•

जो सुखो सग पला स्नेह की गोद मे
स्नेह उसको दिया तो, भला क्या दिया?
स्नेह उसको करो जिसको ठोकर मिली
'स्नेह' बिन रहा जिसका जीवन-दिया!

•

स्नेह तव उर मे बसा तो सत्य ही
स्नेह पाने का तुम्हे अधिकार है,
जो हृदय से स्नेह करते धूल को
मान लो तुमसे उसे भी प्यार है।

••



आँसुओं की धार है उपहार....?

:

आज इस हारे—थके-मारे हृदय मे
हार भी मृदु प्यार बन के बस रही है।

आँसुओ की धार है उपहार किसका ?
सोचती करुणा तुम्हारी ढल रही है,
वह रहे ये भाव अन्तर के तरल बन
या कि इसमे जिन्दगी ही गल रही है।

इन अमोलक मोतियो का मोल क्या है
नीर मे जग-पीर ही जब हँस रही है ?

भेद इस उर के वताऊँ मैं तुम्हें क्या
जव कि मानव-जिन्दगी ही भेद है इक ?
दिवस, महिने, वर्ष के ये पल विपुल सव
रच रहे हर श्वास मे अनुच्छेद हैं इक,

फिर भी यह जीवन-कथा रहती अधूरी
पीर जिसमे प्राण वनके वस रही है।

आह को उर मे सुला कर सो गई मै
किंतु मेरे स्वप्न फिर भी सो न पाये,
स्वप्न के रगीन औ धुँधले जगत मे
सत्य उर के स्वप्न वन कर खो न पाये,
सत्य की आशा करूँ क्या राह देखूँ
कल्पना मे जिन्दगी तो फँस रही है ?

यह उमडती आह की आँधी चली तो
उड न पाया यह हृदय का भार मेरा,
लाख वाधाओ करोडो ठोकरो से
वढ रहा वह प्यार का आभार तेरा,
आज मैं खुद को भुलाना चाहती हूँ
किंतु दुख की याद उर मे वस रही है !

रात मिट जाती अरुण के आगमन से
अश्रु-तारक भी न पीछे छोड जाती,
मनुज चाहे त्याग दे सर्वस्व अपना
मौन हो पर पीर दृग से छलक जाती,
आज क्या उर से उखाड़ू भावना को
भावना हर तार उर का कस रही है ?

क्या सुनाऊँ आज जग को गीत गाकर
जव कि जीवन-गीत अव तक है अधूरा ?
किंतु यह कैसा अनोखा भेद विधि का
गा न पाते जव कि होना गीत पूरा ?
अमरता की आश औ अभिलाप कैसी
जिन्दगी पर मौत प्रतिपल हँस रही है ?



भाव-चित्र

:

अपनी अपनी प्यास सभी को
सभी व्यसन अपने रखते,
पर मेरे ये प्राण विरागी
कभी न जग मधु-कण चखते,
केवल अपने आँसू-जल को
सुरा समझ कर पीने मे,
क्यो दुनियाँ मुझ से जलती है
व्यथा-नशे के जीने मे ?



खोज रही मै जिसे विश्व मे
खोज खोज भी पा न सकी,
रूठ गई मै उन्मन सी हो
अपनी व्यथा वता न सकी,
तव मेरे सूने उर मे
चुपचाप शाति वन वह आया,
दुख ही मेरा दीप वन गया
दूर हो गई तम-छाया !

हृदय ने कह दिया कि
जिन्दगी बस मूक धडकन है,
व्यथा ने तब बताया
जिन्दगी तो तप्त तडपन है,
आँसुओ ने दिखाया
जिन्दगी चुपचाप ढल जाना,
मृत्यु ने कह दिया कि
जिन्दगी मिटता हुआ घन है!



इस धरा पर उष्णता है
क्योकि आहें जल रही हैं,
इस पवन मे चपलता है
क्योकि साँसें चल रही हैं,
शिशिर का आतक फैला
क्योकि उर मे है निराशा,
झर रहे हैं पात पीले
क्योकि झरती मधुर आशा!





कविता क्या ?

ः

हृदय की पीर दृग के नीर-
में जब वह नहीं पाती,
हृदय में भाव घुटते है
जुबाँ कुछ कह नही पाती।

तभी अनजान सी आकुल
कलम है हाथ मे आती,
न मै कुछ सोच पाती, किन्तु
वह कुछ लिख स्वय जाती।

उसे जग काव्य कह देता
मूक उर-गीत को कविता,
जिसे सरमित बनाती है
मनुज के अश्रु की सरिता।

उसी उन्मन उदासी को
अक्षरो मे सजाते है,
कह रहा जग उसे कविता
अश्रु जो गीत गाते है।

अभिवादन

:

ओ इस ससृति के कलाकार !

तेरी रचना का रग रूप
दिखता कुछ अद्भुत सा अनूप,
अब तक यह चित्र अधूरा है
ना एक अश भी पूरा है,
नित नया तूलिका रच जाती
मिटता जाता यह बार बार !

ओ इस ससृति के कलाकार !

मानव को मानवता वर दे
तम मे नूतन आभा भर दे,
चहुँ दिशि लहराये स्नेह-सिधु
लय हो जिसमे दुख-डाह-बिन्दु,
करुणा के मलय झकोरो से
सुख-सुमनो की हो नव बहार !

ओ इस ससृति के कलाकार !

स्वार्थ-जजीर मे जकड रहा
छल-दानव उसको पकड रहा,
यह पथ-भटका मानव का उर
पीडा के फूट रहे निर्झर,
किसके अभिवादन मे है रे
इस जगती की कातर पुकार ?
ओ इस ससृति के कलाकार !



सम्मतियाँ

कुमारी सावित्री सोलकी की कुछ रचनाएँ मुझे पढने को मिली। जीवन की सकुचित काराम्रो को तोडने मे जिस विश्वास की अपेक्षा है, जिस आत्म-विश्वास की आवश्यकता है, वह इन रचनाओ मे स्थान-स्थान पर उभर आया है, जैसे—व्यजन के साथ स्वर हो। अनियत्रित आवेग के साथ काव्य-धारा अग्रसर होती है। मैं इन रचनाओ को पढ कर आश्वस्त हुआ कि हिन्दी के नवयुग के निर्माण मे कुमारी सावित्री की रचनाएँ भी योग देने मे समर्थ हैं। उनके उज्ज्वल और प्रशस्त भविष्य के लिये मेरी अनेक मगल-कामनाएँ हैं।

मास्को }
सोवियत-सघ }

रामकुमार वर्मा



मुझको ये रचनाएँ ग्रेजुएट छात्रा की जैसी लगी—सरस, प्राञ्जल और कवित्वपूर्ण।

पक्तियाँ हृदय का हाल भी कहती है जो एक-एक नारी की कथा है। इससे उबार सरकारी-सचाई का रहना है और सस्कार-जन्य समाज का।

इस सूरत से भी पूर्व पक्ष मण्डित रह सकता है, नही तो पढने के लिये जाना अन्ना (astrayed) ढोरो (animals) का सरकारी मवेशीखाने जाना है और कविता अरण्य-रोदन।

इलाहबाद }

निराला

सावित्रीजी का हृदय कवि-हृदय है, इसमे कोई सदेह नही। उनकी वाज़-वाज पक्तियाँ पाठक के मन पर असर करती हैं।

"मैं सदा तुम्हारे पद-पद्मो की ही रज हूँ,
मैं सदा तुम्हारे उच्छवासो की मृदु माला।"

ये कविता की अच्छी पक्तियाँ हैं और ऐसी पक्तियाँ सावित्रीजी के काव्य-सग्रह मे अनेक है।

उनकी कविताओ की भाषा अच्छी और भाव भी श्रेष्ठ हैं। किन्तु, नया कवि तो भावुकता के धरातल से अत्यत आसक्त रहता है। इस धरातल से सावित्रीजी ज्यो-ज्यो आगे बढेगी, उनका काव्य और भी उत्तम होता जायगा।

नई दिल्ली } रामधारीसिंह 'दिनकर'

* * *

आपकी रचनाएं पढी और रचनाओ को पढते समय एक फ्रेंच साहित्य-मनीषी के ये शब्द एकाधिक बार स्मरण आये कि अनुभूति की एकात्मक अभिव्यक्ति ही सच्ची कविता है। इसमे सदेह नही कि 'स्व' की भूमि मे 'चेतना' काव्य के अकुर बोती है जो कालातर मे अत प्रेरणा द्वारा विकसित और कलात्मकता द्वारा पुष्पित होते हैं। मैं नही जानती कि आपने काव्य-सृजन के पूर्व उद्गारो को उल्लिखित धरातल प्रदान किया है या नही। हाँ आपने इस दृष्टिकोण को स्वीकार अवश्य किया है।

मैंने न जाने क्यो यह धारणा आत्मार्पित कर ली है कि जिसे एक बार पढ कर सहज मे ही बद करके रख दिया जाय वह उत्कृष्ट कोटि की कविता नही। कविता मानस को छू कर स्वय ही प्रतिध्वनित हो उठती है, उसकी कडियाँ अनायास ही अधरो पर घूमने-फिरने लगती हैं। आपके द्वारा प्रेषित गीतो की बहुत सी कडियाँ केवल प्रतिध्वनित ही नही हुई अपितु मेरे मन मे रम-बस गयी हैं। ये कडियाँ तो कितनी ही बार दुहरा चुकी हूँ —

'एक अपने ही हृदय की नाप से,
नाप सकते हम निखिल ससार ये।'

*

'उस जीवन मे आनन्द कहाँ
जिस पर नैराश्य - प्रहार नही,
यदि सूने अधरो के पुट पर
आहो की वदनवार नही।'

और इसी प्रकार की और भी बहुत सी कड़ियाँ हैं।

मेरे हर्षोल्लास का एक और भी आधार है। मन मानता ही नही कि ये पंक्तियाँ उस कवियत्री की प्रौढ कल्पना-मज्जित प्रतिभा और जागरूकता की देन है जो साहित्य-सरोवर की प्रथम सीढी ही अभी उतरी है। स्निग्ध तोपदायिनी लहरो के प्रथम स्पर्श ने ही प्रज्ञा को इतना प्रच्छन्न कर दिया, यह उस सुदूरवर्ती मगल-ज्योति की सकेतिका है, जिसके दर्शन मैं इन रचनाओ की पृष्ठभूमि मे कर रही हूँ।

छदो का योगायोग, भाषा की प्राजलता, शैली की अदुरूहता तथा इन सबके अतराल मे निहित भावनाओ की गुरु-गभीरता प्रभृति काव्य-गुणो का प्रस्तुत रचनाओ मे निवास है।

अत मे मै इन कविताओ के विषय मे इतना ही कहना चाहूँगी—

'प्रथम पद की धीरता ही लक्ष्य-पथ की साध।'

आकाशवाणी
लखनऊ

सुमित्राकुमारी सिनहा



'उस जीवन मे आनन्द कहाँ
जिस पर नैराश्य-प्रहार नही,
यदि सूने अधरो के पुट पर
आहो की वदनवार नही।'

और इसी प्रकार की और भी बहुत सी कड़ियाँ हैं।

मेरे हर्षोल्लास का एक और भी आधार है। मन मानता ही नही कि ये पक्तियाँ उस कवियत्री की प्रौढ कल्पना-मज्जित प्रतिभा और जागरूकता की देन है जो साहित्य-सरोवर की प्रथम सीढी ही अभी उतरी है। स्निग्ध तोषदायिनी लहरो के प्रथम स्पर्श ने ही प्रज्ञा को इतना प्रच्छन्न कर दिया, यह उस सुदूरवर्ती मगल-ज्योति की सकेतिका है, जिसके दर्शन मैं इन रचनाओ की पृष्ठभूमि मे कर रही हूँ।

छदो का योगायोग, भाषा की प्राजलता, शैली की अदुरूहता तथा इन सबके अतराल मे निहित भावनाओ की गुरु-गभीरता प्रभृति काव्य-गुणो का प्रस्तुत रचनाओ मे निवास है।

अत मे मैं इन कविताओ के विषय मे इतना ही कहना चाहूँगी—

'प्रथम पद की धीरता ही लक्ष्य-पथ की साध।'

आकाशवाणी
लखनऊ

सुमित्राकुमारी सिनहा

